International Journal of Applied Research 2016; 2(7): 1002-1004

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(7): 1002-1004
www.allresearchjournal.com
Received: 12-05-2016
Accepted: 17-06-2016

डॉ0 अंशु सरीन
एसो0 प्रोफेसर, गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स डिग्री कालेज, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ0 अंशु सरीन
एसो0 प्रोफेसर, गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स डिग्री कालेज, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

पं0 श्रीराम शर्मा आचार्य के विचारों में: 'आयुर्वेद की शिक्षा'

डॉ0 अंशु सरीन

सारांश
औषधि वही श्रेष्ठ होती है जो रोगों को दूर कर आरोग्यता प्रदान करें और अन्य कोई बीमारी उत्पन्न न हो। आयुर्वेद में जड़ी बूटियों को आरोग्यता प्रदान करने का सर्वोत्तम साधन स्वीकार किया गया है। घर में ही प्रयोग करने वाले विभिन्न मसाले भी रोगो के उपचार में सहायक सिद्ध होते हैं। प्राकृतिक रूप से प्राप्त पौधों में रसायनो की मात्रा गोली, इंजेक्शन की तुलना में कम होती है। अतः वे दुष्परिणाम उत्पन्न नहीं करते हैं। आयुर्वेदिक शिक्षा प्राप्त कर मानव इन औषधियों का सेवन करके स्वस्थ एवं निरोग जीवन प्राप्त कर सकता है।

मुख्य शब्द : वनौषधियां, सुश्रुत, ब्रह्मवर्चस, अश्वगंधा, शंखपुष्पी

प्रस्तावना:
स्वस्थ रहना मनुष्य का स्वाभाविक अधिकार है। इसी आधार पर हमारे ऋषिगणों ने मनुष्य के लिए 'जीवेम शरदः शतम्' का सूत्र दिया था। स्वस्थ वृत्त को जीवन में उतारने वाला सौ वर्ष तक जीकर ही अपना सारा जीवन व्यापार पूरा कर मोक्ष को प्राप्त होगा, यह हमारी संस्कृति का जीवन दर्शन था किन्तु आज यह सब एक विलक्षणता मानी जाती है। परम पूज्य पं0 श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने जहां बिना औषधि के कायाकल्प की बात कही है, वहीं जड़ी–बूटियों द्वारा स्वास्थ्य संरक्षण, के सुगम प्रयोग भी दिये हैं जो आज भी परीक्षित करने पर कसौटी पर खरे सिद्ध हो सकते हैं।

आयुर्वेद की शिक्षा –

> आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रन्थ चरकसंहिता के सूत्र स्थान में एक उद्धरण के अनुसार –
> 'तदेव युक्तं भैषज्यं यदारोग्याय कल्पते। स चैव भिषजां श्रेष्ठो रोगेभ्यो यः प्रमोचयेत् ।'

अर्थात् ''औषधि वही श्रेष्ठ है जो रोग को दूर कर आरोग्य प्रदान कर सके और कोई दूसरी व्याधि पैदा न करे। वही वैद्य श्रेष्ठ है जो रोगी को रोग से सर्वथा मुक्त कर स्वास्थ्य लाभ दे सके।'' आयुर्वेद आप्त पुरूषों द्वारा प्रणीत वेदाश्रित वैज्ञानिक विद्या है। इसे आयुर्वेद के एक उपांग के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। आयुर्वेद में जड़ी–बूटियों द्वारा उपचार करने की पद्धति को सुलभ, निर्दोष और अधिक फलप्रद मानते हुए उसे प्राथमिकता दी गई है। जिस प्रकार भारतवर्ष की सभ्यता और संस्कृति सबसे प्राचीन और उत्कृष्ट स्वीकार की गई है। उसी प्रकार यहाँ का आयुर्वेद (चिकित्सा विज्ञान) भी संसार की समस्त चिकित्सा पद्धतियों का स्रोत माना गया है। अब से ढाई हजार वर्ष पूर्व जब यूनानी सम्राट सिकन्दर ने आक्रमण किया था, भारतवर्ष चिकित्सा विज्ञान में पर्याप्त उन्नति कर चुका था, भारतीय चिकित्सा पद्धति स्वभावतः संसार में प्राचीन स्थान पाने की अधिकारिणी है।
चरक, सुश्रुत द्वारा लिखे गये ग्रन्थ आयुर्वेद के प्रसिद्ध और मानवीय ग्रन्थ हैं। इनके अतिरिक्त और हजारों उच्चकोटि के ग्रन्थ मौजूद हैं और हजारों परिस्थितियों के फलस्वरूप नष्ट हो चुके हैं पर जो ग्रन्थ मौजूद हैं उन्हीं में अनेक ऐसे–ऐसे प्रयोग और चिकित्सा– विधान मिलते हैं कि उनकी तुलना अब भी किसी अन्य प्रणाली में नहीं मिल सकती है। यह सच है कि गत एक डेढ़ हजार वर्षो में भारत के पतन युग में अन्य विषयों की तरह यहां के चिकित्सा विज्ञान की भी बहुत दुर्दशा हुई जिससे इस शास्त्र के सम्मान और महत्व पर काफी धक्का लगा और विदेशी चिकित्सा पद्धतियों ने इसे दबा दिया। परन्तु अब भारतीय नव जागरण के साथ–साथ चिकित्सा क्षेत्र में भी परिवर्तन का प्रकाश दिखाई पड़ने लगा है। आयुर्वेद का अध्ययन विधिपूर्वक किया जाने लगा है, दवाओं को समयानुकूल तैयार किया जाने लगा है और भारतीय चिकित्सा–विज्ञान की विशेषताओं को प्रत्यक्ष रूप में जनता के सम्मुख उपस्थित किया जाने लगा है।

आयुर्वेद के विकास का इतिहास देखने पर ज्ञात होता है कि वैदिककाल में वनौषधियों का प्रयोग उनके प्राकृतिक रूप में ही किया जाता था। आसव–अरिष्ट आदि का प्रयोग बाद में आरम्भ हुआ। आर्षकाल को आयुर्वेद का स्वर्ण – युग माना जाता है। आचार्य धन्वन्तरि से प्रारम्भ होकर यह चरक ऋषि पर समाप्त होता है। अथर्ववेद में 100 सूक्त मात्र आयुर्विज्ञान पर है जिनमें रोग निर्णय, चिकित्सा, लक्षण तथा औषधियों का वर्णन है। वैसे तो चारों वेदों में थोड़ा–थोड़ा वर्णन आयुर्विज्ञान सम्बन्धी है, परन्तु मूलतः अर्थववेद ही आयुर्वेद का जनक माना जाता है –

''इह खलु आयुब्दमश्टांगमुपांगमथर्ववेदस्य ।''

अग्निवेश इस विद्या के प्रणेता माने जाते हैं, जिन्होंने आयुर्वेद का अध्ययन पुनर्वसु आत्रेय से किया था, किन्तु अर्थववेद जिसके एक अंग के रूप में आयुर्वेद ने जन्म लिया, उसमें अथवा ऋषि के माध्यम से यह बताया गया है कि समस्त जीव समुदाय के लिए विधाता ने प्रकृति जगत् में वनौषधियों का प्रावधान रखा है। गुण, कर्म, भेद अलग–अलग हो सकते हैं, किन्तु एक भी पौधा इस धरती पर ऐसा नहीं है, जिसमें औषधीय गुण न हों।

भारद्वाज मुनि को आयुर्विज्ञान के तीन मूल मंत्र समझाते हुए देवराज इन्द्र कहते हैं कि आयुर्वेद मूलतः तीन स्तम्भों पर टिका है–

1. ''प्राणियों के स्वस्थ एवं रूग्ण होने के क्या कारण हैं?
2. स्वस्थ एवं रूग्ण जीवधारियों के क्या लक्षण हैं?
3. स्वस्थ रहने की औषधि (पथ्य एवं जीवनी शक्ति सम्बर्धक बलप्रदायी औषधि) तथा रोगी प्राणी की औषधि क्या है ?''

सारे आयुर्वेद की व्याख्या इन तीन स्तम्भों की धुरी पर चलती है।

औषधि निर्माण :

आज का मनुष्य कृत्रिम साधनों पर निर्भर है। हवा, पानी भी विषाक्त हो चुके हैं ऐसे में आवश्यकता पड़ने पर कौन सी औषधि ली जानी चाहिए, इस विषय में पूज्यवर कहते हैं कि ''जड़ी–बूटी स्वस्थ नीरोग जीवन प्रदान करती है। उनके कोई दुष्परिणाम नहीं होते व अनुपान के साथ वही वीर्य कालावधि में पकी औषधि लेने पर लाभ ही लाभ पहुंचाती है।'' काष्ठ–औषधि विज्ञान वनौषधि विज्ञान को पूज्यवर ने पुनर्जीवित किया व लुप्त हो रही वनौषधियों की गरिमा को पुनः स्थापित कर उनको स्थान–स्थान पर आरोपित कर वनौषधि उपवन लगाने की महत्ता पर बहुत जोर दिया। ब्रह्मवर्चस् शोध–संस्थान के वैज्ञानिक निष्कर्षो के आधार पर प्रायः 50 से अधिक वनौषधियों पर शोधस्तर का एक ग्रन्थ भी प्रकाशित किया गया है व इनके व्यापक अनुसंधान वहां सम्पन्न हुए हैं। एकोषधि प्रयोग के रूप में लिये जाने पर व एक जैसे गुणों वाली औषधियों के सम्मिलित प्रयोग से क्या लाभ कैसे होता है, इसका पूरा वैज्ञानिक आधार पूज्यवर ने समझाया है। ढाई सौ से अधिक औषधियां तैयार चूर्ण के रूप में ताजी औषधियों के रूप में सदा गायत्री तीर्थ शांतिकुंज में उपलब्ध रहती है। आयुर्वेद का गौरव वनौषधियां हैं जिनमें समग्रता होती है। यदि यह विज्ञान घर–घर फैल सके तो हमारी ऐलोपैथी पर–तेज असर कारक औषधियों पर निर्भरता समाप्त हो जाएगी। यही पूज्यवर की सोच थी व इसी आधार पर केन्द्र में भी व स्थान–स्थान पर हर्बल गार्डन बनते चले गये। पूज्यवर ने मसाला वाटिका से घरेलू उपचार पर भी जोर दिया। जिनमें से कुछ मानव शरीर के लिए उपचार इस प्रकार हैं –

मसाला वाटिका से घरेलू उपचार –

पैर – अश्वगंधा, शतावर – बलदायी रसायन

पेट – शरपुंखा, कालमेध – ऊपरी पाचन संस्थान

हृदय – पुनर्नवा, शंखपुष्पी – हृदय एवं रक्तवाही संस्थान

मस्तिष्क – ब्रह्मी, बच – मस्तिष्क एवं मनः संस्थान

घर में ही पायी जाने वाली, आंगन में उगायी जा सकने वाली औषधियों से जिन्हें हम मसालों में प्रयोग करते हैं, से अनेकानेक रोगों का उपचार किया जा सकता है। राई, हल्दी, अदरक, सौंफ, मेथी, जीरा, मिर्च, पुदीना, पिप्पली, गिलोय, तुलसी, अजवाइन, धनिया, टमाटर, लहसुन, ग्वारपाठा, प्याज, आंवला ऐसी है। सुहागा, हींग, काला नमक, लौंग, तेजपत्रक, दालचीनी ऐसे हैं जिन्हें सुरक्षित अपने पास रखकर विभिन्न रोगों में प्रयोग किया जा सकता है। आयुर्वेदिक शिक्षा प्राप्त करके मानव इन औषधियों का सेवन कर स्वस्थ एवं निरोग जीवन प्राप्त कर सकता है।

जड़ी–बूटियों का महत्व –

आज सभ्यता की घुड़दौड़–आपाधापी ने मनुष्य को स्वास्थ्य के प्रति इस सीमा तक परावलम्बी बना दिया है कि वह प्राकृतिक जीवन क्रम ही भुला बैठा है। फलतः रोग–शोकों के विग्रह खड़े होते रहते हैं व छोटी–छोटी व्याधियों के नाम पर धन नष्ट होता रहता है। मनुष्य अन्दर से खोखला होता जा रहा है। जीवनी शक्ति का चारों ओर अभाव नजर आता है। आहार–बिहार में समादिष्ट कृत्रिमता ने जिस प्रकार जिस सीमा तक शरीर के अंग अवयवों को अपंग–असमर्थ बनाया, उसी प्रकार चिकित्सा क्रम भी बनते चले गये। पूर्वकाल में आयुर्वेद ही स्वास्थ्य संरक्षण का एकमात्र माध्यम था। धीरे–धीरे वृहत्तर भारत में समाविष्ट अन्य, संस्कृतियों के साथ यहां अन्य, पैथियां भी आयी और आज चिकित्सा के नाम पर ढेरों पद्धतियां प्रयुक्त होती है। परन्तु वैक्सीन, मारक एण्टीबायोटिक्स, रेडिएशन, तथाकथित स्वास्थ्य सम्बर्धक विटामिन हारमोन्स गणों के घातक दुष्परिणामों पर गहराई से सोचकर विचारशील इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि यदि कोई निरापद जीवनशक्ति संवर्धक औषधियां हो सकती हैं तो वे मात्र प्राकृतिक रूप में पायी जाने वाली वनौषधियां ही हैं। पुरातन काल की चिकित्सा– प्रणाली वनस्पति प्रधान है। चरक संहिता में उसी की प्रधानता है। जड़ी–बूटियां सस्ती होने के साथ–साथ सरलता पूर्वक उपलब्ध भी हो जाती है। इनमें वे तत्व भी होते हैं जो मनुष्यके शरीर में पच और खप जाते हैं। कृत्रिम औषधियों में यह विशेषता नहीं पायी जाती है। जड़ी– बूटियों में अन्यान्य गुणों के साथ पचने और रक्त में घुलने की भी विशेषता है। अतः चिकित्सा में उनका अवलम्बन लेना ही बुद्धिमत्ता है। भारत सहित विश्व के अन्यान्य महत्वपूर्ण देशों में इस सम्बन्ध में जो अनुसंधान किये हैं, उनसे नये परिणाम प्रकाश में आये हैं। भारत में पायी जाने वाली कनेर, सर्पगंधा, गुग्गुल, विहंग, कुमारी, जटामांसी, हल्दी जैसी औषधियों में ऐसे गुण पाये गये हैं जिससे उन्हें चिकित्सा क्षेत्र में बहुत ऊंचा सम्मान मिल सके। पीली कनेर हृदय रोगों में, सर्पगंधा मस्तिष्कीय रोगों व उच्च रक्तचाप में रामवाण पायी गयी है। सदा–बहार में (विन्कारोजिया व अल्बा) कैंसर दूर करने की क्षमता है। दमें में लाल प्याज तथा मधुमेह व गठिया में लहसुन का चमत्कारी प्रभाव देखा गया है। रूस में इसे पेनीसिलिन के समतुल्य माना जा रहा है। निर्धारित जड़ी–बूटियां, जिनका शरीर एवं मन के उपचार– स्वास्थ्य हेतु प्रयोग सुझाया गया है। इस प्रकार है –

1. ''आमाशय एवं उर्ध्वगामी पाचन संस्थान हेतु – मुलैठी, आंवला
2. अधोगामी पाचन संस्थान हेतु – हरीतकी, विल्व
3. हृदय एवं रक्त वाही संस्थान हेतु – अर्जुन, पुनर्नवा
4. श्वास संस्थान के लिए – वासा एवं भारंगी
5. केन्द्रीय स्नायु संस्थान हेतु – ब्रह्मी, शंखपुष्पी
6. वात नाड़ी संस्थान हेतु – मुण्डी एवं निर्गुंडी
7. रक्त शोधन हेतु – नीम एवं सारिवां
8. ज्वर आदि प्रकोपों एवं प्रतिसंक्रामक के नाते–गिलोय, चिरायता
9. प्रजनन–मूत्रवाही संस्थान हेतु – अशोक गोक्षुर एवं

10. स्वास्थ्यवर्धक रसायन के रूप में शतावर, अश्वगंधा व इनके अतिरिक्त तुलसी को सभी रोगों के उपचार के रूप में तथा नीम, घृतकुमारी, अपामार्ग, हरिद्रा, लहसुन को स्थानीय उपचार हेतु रखा गया है।

उपर्युक्त औषधियों के अतिरिक्त दस और औषधियों को इस अमृतोपम वनौषधि समूह में जोड़ा गया है। यह हैं – बला, बहेड़ा, ज्योतिष्मती, बाकुची, रास्ना, वरूण, लोध, शकपुरवा, अमलतास, इन्द्रजौ (कुटज)''

दिल्ली के नेशनल ऐलर्जी सेन्टर, बल्लभ भाई पटेल चेस्ट इन्स्टीट्यूट ऑल इन्डिया इन्स्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइन्सेस, पंजाब विश्वविद्यालय, जम्मू की क्षेत्रीय अनुसंधान शाला (आर.आर. एल.) जैसे भारत स्थित शोध संस्थानों ने जड़ी–बूटियों पर जो नवीनतम शोधों की हैं उनसे यह आशा बंधती है कि भारत जैसे निर्धन देशों में चिकित्सा प्रयोजन के लिए जड़ी–बूटियों का उपयोग अधिक कारगर सिद्ध होगा।

वनौषधियों की उपादेयता वर्तमान परिप्रेक्ष्य में –

किसी भी औषधि का लाभ पहुंचाना या हानिकारक होना इस तथ्य पर निर्भर करता है कि उसकी पहुंच कितनी गहरी है। रसायन– नाभिक प्रधान पाश्चात्य औषधियों व प्रकृति से प्राप्त वनस्पतियों की जब तुलना की जाती है तब इस तथ्य को ध्यान में रखना पड़ता है। पाश्चात्य औषधियां संश्लेषण के आधार पर बनी होती है। शरीर की व्याधियों के उपचार हेतु जब उन्हें प्रयुक्त किया जाता है तो यह मानकर चलाना चाहिए कि सूक्ष्म विकारों के उन्मूलन कार्य में तलवार की ही भूमिका निभायेंगी। सूक्ष्म औषधियां जहां बिना आसपास के ऊतकों को हानि पहुंचाये व्याधिकारक प्रक्रिया से सीधे मोर्चा लेती हैं वहीं स्थूल औषधियां स्वस्थ ऊतकों को भी बड़े परिणाम में हानि पहुंचाती हैं।

प्राकृतिक रूप में प्राप्त पौधों में प्रभावी रसायनों की मात्रा गोली, इन्जेक्शन आदि की तुलना में कम पर सूक्ष्म होती है। अतः वह कभी दुष्परिणाम उत्पन्न नहीं करती। यही कारण है कि अब धीरे–धीरे औषधि रूप में प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त जड़ी–बूटियों का महत्व जन साधारण की समझ में आने लगा है। जीवनी शक्ति संवर्धन एवं रोगों के मूल कारण का निवारण, यह द्विविध प्रक्रिया प्राकृतिक औषधि उपचार से भली भांति सम्पन्न होती देखी जाती है। रसायन मात्र को ही लक्ष्य मानकर दी जाने वाली औषधियां किसी भी रूप में वनौषधियों की तुलना में नहीं ठहर पाती। उल्टे इनके तेज प्रभाव से ऐसे–ऐसे दुष्परिणाम देखे जाते हैं कि कोई भी व्यक्ति एक बार उन्हें प्रत्यक्ष किसी के शरीर में घटते देख इन्हें लेने का विचार भी मन में नहीं ला सकता। वनौषधि चिकित्सा समग्र इसलिए है कि वह एक पूरे जैविक संस्थान की चिकित्सा को अपना उद्देश्य मानकर चलती है। आधुनिक दवाओं की तुलना में जड़ी–बूटियों की उपयोगिता इसलिए भी बढ़ जाती है क्योंकि वे सर्वसुलभ हैं, समर्थ हैं, हर कोई उन्हें उपयोग कर सकता है और वे हानिरहित भी हैं।

अभी तक सारे संसार की 4 लाख प्रकार की वनस्पतियों में मानव मात्र 8 हजार के गुण जान पाया है। वह भी आप्तवचनों में उदधृत औषधि संदर्भो के कारण। जितनी भी औषधियां आज प्रचलित हैं, उनमें से अधिसंख्या की जानकारी विश्व मानस को भारतवर्ष ने दी है। यही एक प्रमुख कारण है कि इन पौधों की गरिमा को जीवन बनाये रखने का उत्तरदायित्व हम सब के लिए और भी बढ़ जाता है। विशेषकर इसलिए भी कि बढ़ती रूग्णता, संक्रामक रोगों कुपोषण की समस्याओं से ग्रस्त भारत जैसे निर्धन कहे जाने राष्ट्र के लिए इन वनौषधियों का प्रचलन ही सर्वोपयोगी मार्ग है। भारत की स्थिति को देखते हुए वह चिकित्सा पद्धति ही उपयुक्त जान पड़ती है जो मन सुलभ हो। एक अनुमान के अनुसार देश में 6 करोड़ से भी अधिक क्षय रोग तथा कुपोषण से ग्रस्त व्यक्ति है, तथा उनकी संख्या भी करोड़ो में है जो किसी न किसी व्याधि से पीड़ित होने के कारण माह में एक सप्ताह काम करने योग्य नहीं रहते हैं। यदि इन्हें मात्र प्रारंभिक उपचार की सुविधा उपलब्ध हो जाए तो वे नीम हकीमों के हाथ पड़कर अपना स्वास्थ्य और भी बिगड़ने से बचा सकेंगे। उच्च शिक्षा प्राप्त चिकित्सा विदेश में बसाना या शहरों में निजी प्रैक्टिस करना अधिक पसन्द करते हैं। सम्मिश्रण व मिलावट के कारण आयुर्वेद पर से लोगों की श्रद्धा घटती जा रही है। ऐसे में मूलतः देहातों व कस्बों तक स्वास्थ्य संरक्षण का सही शिक्षण कैसे पहुंचे यही सोचकर ब्रह्मवर्चस् शोध संस्थान ने इस घरेलू उपचार पद्धति के वैज्ञानिक आधार इतने सशक्त बताए हैं कि बिना किसी ऊहापोह के इसे बहुसंख्यक व्यक्तियों तक पहुंचाया जा सकता है एवं एक समानान्तर चिकित्सा व्यवस्था खड़ी की जा सकती है।

चाय के स्थान पर प्रज्ञापेय :

चाय एक ऐसा पेय हैं जिनका सेवन लगभग प्रत्येक व्यक्ति करता है। चाय व्यक्ति की दिनचर्या में इस प्रकार शामिल हो गयी है कि यदि दिन में चाय न मिले तो शरीर में शिथिलता का अनुभव होने लगता है। आचार्य जी के अनुसार चाय सभ्य संसार में पनपने वाला मादक पदार्थ है। चाय का प्रचार सर्वप्रथम चीन में हुआ था। चाय में कैफिन पाया जाता है जो निकोटिन जैसा प्रभाव देता है। चाय पीने से रक्तचाप बढ़ता है। चाय में पाये जाने वाले कैफीन से शरीर में विटामिन 'बी' की कमी होती है। विटामिन 'बी' की कमी से ऐनीमिया, श्रवण तथा दृष्टि शक्ति का ह्रास, स्मरण शक्ति का ह्रास आदि अनेक रोग होते हैं। सभ्य जगत ने आज चाय को अन्य मादक पदार्थो के समान ही अपना लिया है। आचार्य जी चाय के स्थान पर ''प्रज्ञापेय'' का समर्थन करते हैं जो पूर्णतया लाभकारी औषधियों से निर्मित है। यह पेय बुद्धिवर्धक, बलवर्धक है व सभी रोगों से रक्षा करता है।

उपरोक्त पक्षों की समीक्षा करने के बाद चिकित्सा पद्धति के औचित्य पर पुनर्विचार करना आवश्यक हो जाता है। आयुर्वेद चिर– प्रतिष्ठित चिकित्सा विज्ञान है। सुनिश्चित एवं मजबूत आधारों पर खड़ी यह पद्धति प्रकृति के अनुकूल जीवनचर्या को प्रधानता देती है। हमारे चारों ओर पायी जाने वाली दिव्य वनौषधियों के उपयोग को यदि बढ़ावा दिया जाए तो एक वैकल्पिक जीवन दर्शन एवं पीड़ित मनुष्यता के लिए समग्र चिकित्सा प्रणाली का प्रतिपादन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. आचार्य शर्मा पं0 श्रीराम : 'आध्यात्मवादी भौतिकता अपनाई जाए' प्रकाशक : श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट, शांतिकुंज, हरिद्वार
2. सम्पादक ब्रह्मवर्चस : नीरोग जीवन के महत्वपूर्ण सूत्र प्रकाशक : अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा
3. सम्पादक ब्रह्मवर्चस : 'जीवेम शरदः शतम' प्रकाशकः अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा
4. सम्पादक ब्रह्मवर्चस : शिक्षा एवं विद्या, अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा
5. सम्पादक ब्रह्मवर्चस : 'युगद्रष्टा का जीवन दर्शन' अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा